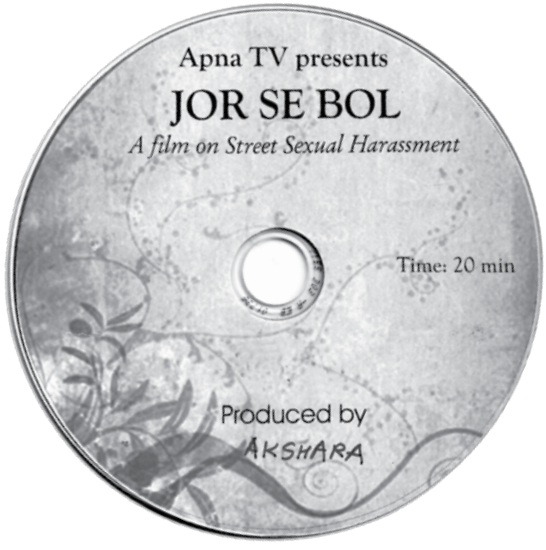

ज़ोर से बोल
छेड़ख़ानी के ख़िलाफ़

प्रस्तुति : अपना टीवी

निर्माता : अक्षरा, महिला संदर्भ केन्द्र, मुंबई

अवधि : 20 मिनट

भाषा : हिन्दी

जैसे कि अपने नाम से ही ज़ाहिर है यह फ़िल्म लड़कियों व महिलाओं द्वारा सार्वजनिक जगहों पर झेली जाने वाली छेड़खानी के अनुभवों पर रोशनी डालती है। बीस मिनट में फ़िल्म बखूबी दर्शाती है कि किस तरह मर्दानगी के मिथकों से प्रभावित नवयुवक सार्वजनिक जगहों जैसे कॉलेज या पार्क में आती-जाती लड़कियों को छेड़ते हैं और इस व्यवहार का लड़कियों के व्यक्तित्व, उनकी आज़ादी और मानसिकता पर क्या प्रभाव पड़ता है।

फ़िल्म इस सोच को तोड़ने में सफल रही है कि छेड़खानी एक मज़ाक का या हलका-फुलका नॉर्मल मामला नहीं वरन् एक संगीन अपराध है और हर शख्स को इसका पुरज़ोर विरोध करना चाहिए। फ़िल्म की शुरूआत से लेकर इसके समापन तक इसमें औरतों के ख़िलाफ़ एक ऊर्जात्मक जंग दिखाई देती है।

फ़िल्म की शुरूआत होती है अखबार में छपी 'यौनिक हिंसा' की खबरों से जिसके माध्यम से यह दिखाया गया है कि विभिन्न तरह की यौनिक हिंसा का महिलाओं पर क्या असर पड़ता है। फ़िल्म में दिनों-दिन बढ़ती इस हिंसा के प्रति चिंता भी व्यक्त की गई है।

इस वृत्तचित्र में कुछ लड़कों व लड़कियों से बातचीत के द्वारा यह कोशिश की गई है कि छेड़खानी जैसी हरकतों के पीछे पुरुषों की मानसिकता, उनका सामाजीकरण व लड़कियों के प्रति उनकी धारणाओं को समझा जा सके। ज़्यादातर लड़कों से जब यह पूछा गया कि 'वे छेड़खानी क्यों करते हैं' या 'ऐसी हरकतों से उन्हें क्या मिलता है' तो जवाब था कि यह मर्दानगी दर्शाने का एक ज़रिया है। लड़कियों को छेड़खानी से खुशी होती है। छेड़खानी से लड़कियों को मर्द होने का एहसास होता है ताकि वे लड़कों के पीछे आ सकें। छेड़खानी की एक और वज़ह बताते हुए कुछ

लड़कों ने बताया कि वे उन्हीं लड़कियों को छेड़ते हैं जो 'छोटे' व 'भड़काऊ' कपड़े पहनती हैं।

फ़िल्म की यह बहुत बड़ी खूबी है कि इसने आम लोगों से बातचीत और उनके विचारों के माध्यम से पुरुष मानसिकता के मिथकों को चुनौती दी गई है। जहां एक ओर लड़कों की सोच प्रस्तुत की गई है वहीं लड़कियों से की गई बातचीत इस सोच के मिथकों को सशक्त तरीके से तोड़ती नज़र आती है। लड़कियों ने खुले तौर पर ज़ाहिर किया कि लड़कों द्वारा की जा रही छींटाकशी और छेड़खानी से उन्हें नफ़रत है, ऐसी हरकतें उन्हें लड़कों से और दूर कर देती हैं। वे ऐसे लड़कों का सम्मान नहीं कर सकतीं जो इस तरह का अश्लील बर्ताव करते हैं।

इसके अलावा लड़कियों को यह भी डर रहता है कि यदि वे छेड़खानी का विरोध करती हैं तो उन्हें कई तरह की अन्य परेशानियों का भी सामना करना पड़ सकता है। उन्हें डर रहता है कि परिवार उन्हें ऐसी हिंसाओं से दूर रखने के लिए उनकी पढ़ाई, आने-जाने पर रोक-टोक या घर से निकलने पर पांबदी न लगा दें। यही वज़ह है कि लड़कियां अपने साथ होने वाली हिंसा को ज़्यादातर नज़रअन्दाज़ करती हैं या इस बारे में परिवार में बात नहीं करतीं।

फ़िल्म के अंत में लड़कियां समाज व परिवार से यह गुज़ारिश करती नज़र आती हैं कि परिवार अपनी बेटियों पर विश्वास करें, उनकी परेशानियों को समझें, उन पर भरोसा करें व उनको इस तरह की यौनिक हिंसा का आत्मविश्वास के साथ लड़ने व सामना करने की प्रेरणा दें।

फ़िल्म का स्पष्ट और मुखर संदेश है कि लड़कियों व औरतों के साथ छींटाकशी, यौनिक छेड़छाड़ व हिंसा का जवाब चुप्पी में नहीं है वरन् समाज के सामने लाकर सामना करने में है।

—सीमा श्रीवास्तव

आओ मिलकर शहरों को सुरक्षित बनाएं औरतों और बच्चों पर होने वाली हिंसा मिटाएं